केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

(मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार के सहयोग से)

जूलाई २०१८ अंक, वर्ष २३, नं ७३ लक्ष्मीनगर, पट्टम पालस, तिरुवनन्तपुरम-६९५ ००४

त्रैमासिक हिन्दी शोध-पत्रिका

अकादमी की उपाध्यक्षा डॉ.एस.तंकमणि अम्मा
स्वागत भाषण दे रहे हैं।

श्रीमती आनन्दवल्ली द्वारा रचित 'अमृतम गमया' का
विमोचन कर रहे है आदरणीय डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर जी।
पुस्तक प्राप्त करते हैं जस्टीस एम.आर.हरिहरन नायर जी।

उद्घाटन भाषण दे रहे हैं
महारानी अश्वति तिरुनाल।

जन्मदिन के सुअवसर पर महारानी
अश्वति तिरुनाल गौरी लक्ष्मीबाई डॉ.नायर जी को
स्मृतिचिह्न प्रदान कर रहे हैं।

डॉ.नायरजी द्वारा रचित 'राम मारुति मिलन' का
विमोचन करते हैं आदरणीय महारानी अश्वति तिरुनाल।
पुस्तक प्राप्त करते हैं प्रो.पंडित बन्ने

आशीर्वाद भाषण दे रहे हैं आदरणीय
श्री. अय्यप्पन पिल्लै जी

अकादमी के कार्यकारी सम्पादक
विष्णु आर.एस. भाषण दे रहे हैं।

समारोह के आदरणीय मंच

समारोह के शानदार सभा

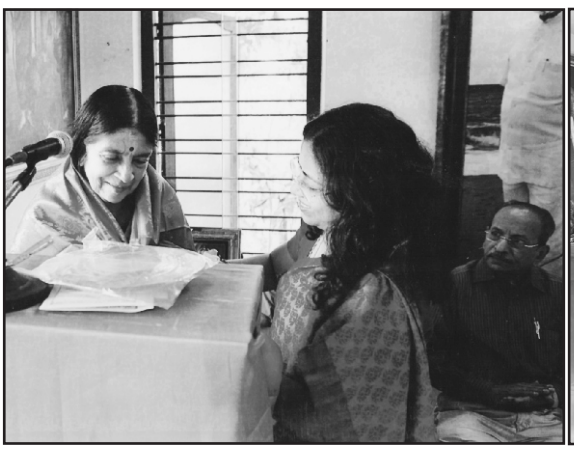

अकादमी के महामंत्री आदरणीय अश्वति तिरुनाल को अंगवस्त्र पहनाकर समादर करती हैं।

अकादमी के महामंत्री कृतज्ञता ज्ञापन करती हैं।

पंजीयन संख्या R. No. 26957 - 1996

समारोह में प्रतिभागी छात्रों को अध्यक्ष पुरस्कार दे रहे हैं।

महारानी डॉ.नायरजी को स्मृतिशेष महाराजा उत्राटम तिरुनाल के नाम पर देनेवाले शान्तिदूत पुरस्कार दे रहे हैं।

अकादमी के सदस्य डॉ.उषाकुमारी आशीर्वाद भाषण दे रही हैं।

प्रोफ.पंडित बन्ने आशीर्वाद भाषण दे रहे हैं।

डॉ.टी.पी.शंकरनकुट्टी नायर आशीर्वाद भाषण दे रहे हैं।

अकादमी के मुख्य संरक्षक जस्टीस एम.आर.हरिहरन नायर आशीर्वाद भाषण दे रहे हैं।

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी के लिए शोध-पत्रिका डा.एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्री निकेतन, तिरुवनन्तपुरम - ४
द्वारा मुद्रित संपादित और श्रीरामदासमिशन प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग हाऊस, तिरुवनन्तपुरम-८७ में मुद्रित।

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

(मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार के सहयोग से)

जूलाई २०१८ अंक, वर्ष २३, नं ७३ लक्ष्मीनगर, पट्टम पालस, तिरुवनन्तपुरम-६९५ ००४

keralahindisahityaacademy.com www.drnchandrasekharannair.in

मुख्य सम्पादक

डा० एन० चन्द्रशेखरन नायर

कार्यकारी सम्पादक

विष्णु आर.एस.

सम्पादक मंडल

डा० के.सि.अजयकुमार
डा० के.पि.उषाकुमारी
आर.कृष्णनकुट्टि
डॉ.आर.राजेशकुमार

संरक्षक

जस्टिस एम.आर.हरिहरन नायर

सम्पादकीय कार्यालय

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी,
श्रीनिकेतन, लक्ष्मीनगर,
पट्टम पालस पोस्ट
तिरुवनन्तपुरम - 695 004
दूरभाष - 0471 - 2541355

प्रकाशकीय कार्यालय

मुद्रित : (द्वारा)
श्रीनिकेतन, लक्ष्मीनगर,
तिरुवनन्तपुरम - 695 004
मूल्य-एक प्रतिः 20.00 रुपये
आजीवन सदस्यता : 1000.00 रुपये
संरक्षक : 2000.00

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

(मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार के सहयोग से)

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका कहाँ कहाँ जाती है?

कन्याकुमारी, मैसूर-२, महाराष्ट्रा, मणिपुर, मद्रास-६, कलक्कता-२, नई दिल्ली (अनेक स्थान), गुन्डूर, त्रिवेन्द्रम (अनेक जगहें), बागपत (यु.पी.) उन्नाव (उ.प्र.), बिलासपुर (म.प्र.), गुंतकल, जबलपुर, इलहाबाद, अहमदाबाद, बिरख्डी, जमशेदपुर, लातूर, हैदराबाद, रतलाम, देवरिया, गाजियाबाद, इम्फाल, चुडीबाज़ार, पीली भीत, फिरोजाबाद, अम्बाला, लख्नऊ, बलांगीर, बिहार, पटना, गया, बांका, ग्वालियर, भगलपुर, देवधर, जयपुर, बनारस, तृशूर, आलप्पुषा, मेरठ केन्ट, कानपुर, उज्जैन, पानीपत, होरंगाबाद, सीतामठी पोस्ट, प्रतापगढ, सरगुजा, बिजनौर, भीलवाडा, सतना, रेलमंत्रालय, तिरुवल्ला, वर्कला, कोट्टयम, नई माही, ओट्टप्पालम, चेप्पाड, लक्किडि, नेय्याट्टिनकरा, कोषिकोड, पय्यन्नूर, कोल्लम, मान्नार, मंगलोर, पुरनपुर, पंजाब, विशाख्रपटनम

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय नई दिल्ली द्वारा निर्देशित जगहें :

तमिल नाडु:- अरुम्बाक्कम, तोरापक्काओ, मद्रास, चेन्नै-३२, क्रोमोपेट्टा, चेन्नै-२१, चेन्नै-२, चेन्नै-८, कान्चीपुरम, तिरुचिरापल्ली, तिरुचिरापल्ली-२, नोर्त अरकोट, ताम्बरम, कोयम्बतूर, सेलम, सेलम-२६, चेन्नै-३४, चेन्नै-२४, तिरुचिरापल्ली-२, चेन्नै-३०, कोयम्बतूर-४, चेन्नै-२८, चेन्नै-८६। **गुजरात:-** अहमदाबाद, बरोडा। **कर्नाटक:-** बांगलोर, चित्रदुर्ग, श्रीनिगेरी, मौंगलोर, मैसूर, हस्सन, मान्डीया, चिगमौंगलोर, षिमोगा, तुमकूर, कोलार। **महाराष्ट्रा:- मुम्बई,** कोलाबा-मुम्बई, मुम्बई-२०२, माटुंगा, मुम्बई-८, मुम्बई-८६, अन्देरी-६९, मुम्बई-२६, मुम्बई-८७, मुम्बई-२, औरंङगाबाद-३, औरंङगाबाद-२, औरंङगाबाद-१, नागपुर, रामटाक-नागपुर, सताना, नन्दगौन-नासिक, पूना, पूना-१, पूना-४, मानमाड-नासिक, चन्द्रपुर, अमरावती, कन्डहार, कोलहापुर, बानडरा, अकोला, नासिक, अहमदनगर, जलगौन, दुलिया, सांगली-कोलहापुर, षोलापुर, सतारा, सान्ताक्रूस, बारसी-४१३, माटुंगा, संगली-४१६। **वेस्ट बंगाल:-** कलक्कत्ता। **हैदराबाद:-** सुल्तान बाज़ार। **गौहाटी:-** कानपुरा। **नई दिल्ली:-** आर, के पुरम। गोवा:- मपुसा-५०७।

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेख्रक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं हैं। सम्पादक

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका केरल विश्व विद्यालय से अनुमोदित पत्रिकाओं की सूची में शामिल की गयी है। (संपादक)

इस अंक में

	लेखन	पेज नं
1.	**सम्पादकीय**	**6**
2.	**हिन्दी दलित साहित्यः एक अंतरंग पहचान** *विष्णु आर.एस.*	**7**
3.	**हिन्दी की उपेक्षा क्यों** *सीताराम पाण्डे*	**9**
4.	**अमर गीतकार कवि प्रदीप** *बद्री नारायण तिवारी*	**11**
5.	**लघु कथा : अतीत से भविष्य की ओर** *किशनलाल शर्मा*	**13**
6.	**वैशिक धरातल पर हिन्दी का प्रसार तथा उपादेयता** *शंकरलाल महेश्वरी*	**16**
7.	**हिन्दी साहित्यकारों की प्रेम दृष्टि** *नन्दकिशोर बावनिया*	**18**
8.	**विधि समस्या और समाधान - भारच ता न्यायित जनतंत्र** *सुरेन्द्र प्रताप सिंह*	**21**

सम्पादकीय

इस शोध पत्रिका का प्रकाशन सन् १९९६ अक्टूबर दूसरी तारीख को गाँधी जयंती के दिन प्रारंभ हुआ। त्रैमासिक पत्रिका के रूप में इसका प्रकाशन होता था। पिछले २२ वर्ष से इसने केरल हिन्दी साहित्य अकादमी के नाम जो सेवा अर्पित की, वह बहुमूल्यवान रही थी। अकादमी के प्रारंभ से अब तक जितनी प्रगति एवं अभिवृद्धि हुई थी, उसका एकदम वर्णन करना असाध्य है। अकादमी आज अतंर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त हो गयी है। स्थानीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर इसका विशेष आदर है। मुख्यतः यह पत्रिका भारत की संस्कृति एवं वैभव पर ध्यान देती थी। भारत के राष्ट्रीय एवं जनजीवन पर आधारित विषयों पर अकादमी ने पूर्णतः ध्यान जताया था। अतः पूरे देश की साहित्यिक मनस्थिति शोध पत्रिका में शामिल थी।

मेरी रचनाएँ इन वर्षों में हिन्दी में ही छपती थी। उत्तर भारत में इनका प्रचार रहा था। मेरे साहित्यिक से ममत्व दिखाते हुये अनेक हिन्दी साहित्यकार मेरी रचनाओं पर ग्रन्थ निकलते रहे। कई प्रातों के प्रख्यात साहित्यकार इस गणना में थे। डॉ. नत्थन सिंह इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। उनकी रची मेरी जीवनी 'केरलीय प्रेमचन्द' देश भर प्रख्यात हैं। केरल के दो प्रख्यात साहित्यकारों ने उस ग्रंथ के नाम पर अखबारों में लेख प्रकाशित किये, जो आज भी विद्वानों की चिंता का विषय है। दोनों केरल सरकार के चीफ सेक्रेटरी रहे थे, इसलिए उसकी मान्यता विशेष स्थाई रही थी। इन सबके आधार में अकादमी की पत्रिका प्रतिष्ठा एवं गौरव प्राप्त करती गयी। आज इस पत्रिका की इज्जत इसकी संस्था जैसी बुलंद मानता हूँ।

डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर

हिन्दी दलित साहित्यः एक अंतरंग पहचान

विष्णु आर.एस.

दलित मुक्ति के प्रश्न हिन्दी साहित्य में बडी तिक्ता से उभरकर आये हैं। समाज के दलित वर्ग अपनी पीड़ाओं की अभिव्यक्ति साहित्य के द्वारा करते हुए सामाजिक व्यवस्था का घोर विरोध कर रहे हैं।

हिन्दी साहित्य में दलित शब्द का प्रयोग उस वर्ण के रूप में होता है, जिसे हिन्दु वर्ण व्यवस्था में अस्पृश्य कहा है। दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वात्मीकि के अनुसार दलित शब्द का अर्थ है जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया हुआ, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया-हुआ, उपेक्षित, घृणित, मसला, हतोत्साहित, वंचित आदि। इन अर्थों के अनुसार भारतीय सामाजिक व्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर समझी जानेवाली जातियों को लेकर जो साहित्य लिखा जाएगा उसे दलित साहित्य कहा जायेगा। दलितों द्वारा लिखा साहित्य स्वानुभूति का साहित्य है। गैर दलितों द्वारा दलितों की पीड़ा के विषय में लिखा गया साहित्य सहानुभूमि का साहित्य है। उसमें पीड़ा की वैसी अनुभूति नहीं हो सकती।

दलित ही दलित की पीड़ा लिख सकता है पर उसमें इतनी सच्चाई तो है ही कि दलितों ने जो जिल्लत, जो जहालत, जो अपमान और पीड़ा झेली है, जिसका चित्रण उनके अतिरिक्त कोई दूसरा कर ही नहीं सकता। दलितों द्वारा लिखी गयी आत्मकथाऐं इस बात का प्रमाण भी है। दलित साहित्य पीड़ा, वेदना, मुक्ति का ही साहित्य नहीं, बल्कि वह अपने अधिकारों, अस्मिताओं और पहचान केलिए संघर्ष करनेवालों का साहित्य है।

दलित जीवन की समस्याओं को केन्द्र में रखकर लिखे गये साहित्य में उपन्यास, कहानी और आत्मकथा भी हैं। दलित कहानियों में दलितों की पीड़ा, व्यथा-दुःख और शोषण का चित्रण है। दलितों ने जो संघर्ष झेला, उसका जीवंत वर्णन दलित कहानियों में है। इन रचनाओं में दलित समाज के बहुआयामी जीवन संदर्फों का वास्तविक रचनात्मक अभिव्यक्ति हुई है। सामाजिक यथार्थ को उजागर करके दलित वर्ग की दीन-हीन दशा के बारे में उन्हें अवगत कराना दलित साहित्य का अभीष्टक लक्ष्य है।

आज का दलित साहित्य आत्मकथा, उपन्यास, कहानी, कविता आदि से संपन्न है। इसमें कहानी अधिक सुशोभित है। इस समय के प्रमुख दलित कहानीकार है - स्वर्गीय ओमप्रकाश वात्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, शिवमूर्ति, दयानंद बटोही, सूरजपाल चौहान, रमणिका गुप्ता, कुसुम वियोगी, विपिन बिहारी, रजत रानी मीनू, प्रेम कपाड़िया, कालीचरण प्रेमी, राजेशकुमार बुद्ध, सुशीला टाकभौरे आदि।

अनेक वर्षों से हमित, पीड़ित ये लोग अपनी आशा-आकांक्षाओं को दबाकर जी रहे हैं। ऐसी स्थिति में इन उपेक्षित, असहाय वर्ग का गहन गंभीर अनुभूतियों की अस्त्रधारा पहले पहल प्रेमचंद की रचनाओं के माध्यम से ही फूट निकली। कफन, और ठाकूर का कुआँ इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

रचना प्रक्रिया की दृष्टि से दलित साहित्य को आगे बढ़ानेवाली साहित्यिक प्रवृत्तियाँ है-

- अम्बेदकरवादी विचारों पर अटूर विश्वास
- स्वस्थ सामाजिक संरचना का अनवरत प्रयास
- दलित अस्मिता की तलाश
- समत्वबोध
- सामाजिक अन्याय का प्रतिरोध एवं प्रतिकार
- व्यवस्था के प्रति विद्रोह
- सामाजिक परिवर्तनों के नायकों का गुणगान
- यथा स्थितिवाद का विरोध
- अन्धविश्वास एवं पाखंडों का विरोध
- वर्णव्यवस्था से उपजी अमानवीय त्रासदी से मुक्ति
- भोगी हुई पीड़ा की यथार्थ अभिव्यक्ति

दलित कविता : दलित व्यक्ति की शुरुआत स्वामी अछुतानंद हरिहर के कविता संग्रह अधिवंश का डंका से मानी जा सकती है। अनेक दलित कवि प्रारंभ में महात्मागाँधी और स्वामी दयानंद सरस्वती के प्रभाव के रंग में कविताएँ लिखते रहे।

दलित काव्य क्षेत्र में योगदान रखनेवाले रचनाकारों में निकरिदेव सेवक (चिन्गारी), सुखवीर सिंह (बयान-बघर), मोहनदास नैमिशराय (आग और आन्दोलन, सफदर का बयान), ओमप्रकाश वात्मीकि (सदियों का संताप, बस! बहुत हो चुका) दयानंद बटोही (यातना की आँखें), जयप्रकाश कर्दम (मैं गूँगा नहीं था), ड़ॉ.सुरेश पंचम (भीख नहीं अधिकार

चाहिए), डॉ.तेजसिंह (आज का समय) और जयप्रकाश लीलावाल (अब हमें ही चलना है) आदि प्रमुख हैं।

दलित कहानी: हिन्दी में पहली दलित कहानी सन् १९०० के बाद ही प्रकाशित हुई थी। इस युग में दलितों का विद्रोह धीरे-धीरे सुलगता हुआ सामाजिक धरातल तक आ पहुँचा था।

हिन्दी के प्रारंभिक युग के कुछ कथाकारों की कहानियों में दलितों के प्राते सहानुभूति देखने को मिलती है। खास तौर पर निराला और यशपाल की कहानियों में। निराला की दो लंबी कहानियाँ चतुरी चमार और बिल्लेसुर बकरिहा को ले सकते हैं। यशपाल की कहानियों में भूख, गरीबी और शोषण का अत्यंत दारण चित्रण हुआ है। मूल रूप में यह उनकी दलित चेतना है।

हिन्दी साहित्य में प्रेमचंद एक ऐसे कथाकार थे, जिन्होंने पहली बार भारतीय समाज में नरकीय जीवन बितानेवाले दलितों को अपनी कहानियों का विषय बनाया, उनकी संपूर्ण यातनाओं के साध। कफन, ठाकुर का कुआँ, सद्गति, दूथ का दाम, पूस की रात आदि कहानियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

हिन्दी कथा-साहित्य में दलित चेतना की अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से आठवाँ दशक महत्वपूर्ण है। एन.सिंह के संपादकत्व में निकले यातना की परछाइयाँ कहानी संकलन में दलित कहानीकारों की कहानियों को संकुलित किया गया है। इन में ओमप्रकाश वात्मीके, प्रेमशंकर, जयप्रकाश-कर्दम, दयानंद बटोही, मोहनदास नैमिशराय, प्रेतम कपाटिया, रत्नकुमार, सम्भरिया और कुसुम मेघवाल की कहानियाँ संकलित हैं।

बीसवीं सदी के अंतिम दशक में दलित-कहानी एक आन्दोलन का रूप ले लिया। इस दशक में कथाकारों के कथा संग्रह आये, जैसे-सुरंग (दयानंद बटोही) चार इंच की कलम (डॉ.कुसुम योगी), टूटना बहन (डॉ.सुशीला टाकभौरे) आवाज़ें (मोहनदास नैमिशराय), हैरी कब आयेगा (सूरजपाल चौहान) सलाम (ओमप्रकाश वात्मीकि), सत्य का सफलनामा (जियालाल आर्य), चंद्रमौलिक का रक्तबीज (सत्यप्रकाश) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। पत्र-पत्रिकाओं में जिन दलित कथाकारों की कहाकनियाँ प्रकाशित हुई है, उनका नामोल्लेख करना भी अवश्यक है। इन कथाकारों में रजत रानी मीनू, पारसनाथ, अजय यतीश, स्वरूप चन्द्र, अंगद किशोर, अरविंद कुमार राही आदि के उल्लेखनीय हैं।

दलित उपन्यास : दलित उपन्यास दलित जीवन का सही दश्तैवेज हौ। मोहनदास नैमिशराय का मुक्तिपवी, जयप्रकाश कर्दम का छप्पर, करुणा, सत्यप्रकाश का जस तस भई सबेर, श्रवण कुमार का प्रेमयात्रा, प्रेम कपाटिया का मिट्टी की सौगन्ध आदि हिन्दी के बहुचर्चित दलित उपन्यास है।

दलित आत्मकथा : दलित आत्मकथा दलित साहित्य की सक्ष्म विधा के रूप में आज दलित जीवन की त्रासदी को अभिव्यक्ति दे रहा है। हिन्दी दलित साहित्य में उपलब्ध मुख्य आत्मकथाएँ है - अपने अपने पिंजड़े मोहनदास नैमिशराय), जूठन (ओमप्रकाश वात्मीकी), कंधों पर बचपन (डॉ.थ्योराजसिंह बेचैन)। ये आत्मसथाएँ दलित जीवन के सरोकारी को समेरती हुई भारतीय जाति व्यवस्था हिन्दू धर्म, जन्म सिंद्धांत पर प्रश्न चिह्न लगाती हैं। ये रचनाएँ दलितों के सामाजिक, आर्थिक, सौस्कतिक, शोषण के विरोध में अपनी आवाज़ों बुलंद करते हुए शोषक वर्ग को अंतर्मुखी होकर सोचने केलिए बाध्य करती हैं।

दलित साहित्य की अन्यविधाएँ : दलित साहित्य की अन्यविधाओं में सबसे पहले नाटक साहित्य ले सकते है। हिन्दी साहित्य के आदि, मध्य और रीतिकालों में नाटकों का सर्वथा अभाव रहता थ। स्वामी अछुतानंद हरिहर का शंबूकवध स्वतंत्रता पूर्व युग का उल्लेखनीय नाटक माना जाता है। इसके बाद माताप्रसाद के अछूत का बेटा, झलकारी बाई (१९४७), तटपकीमुक्ति (१९९९), प्रतिरोध (२०००), अन्तहीन बेटियाँ (२००२) आदि नाटक दलित नाटक साहित्य को संपुष्ट किया।

दलित साहित्य में आलोचना और निबंध भी अब शैशवावस्था में है। पत्र-पत्रिकाओं में समीक्षात्मक रचनाएँ बराबर आ रही है। पुस्तकाकार में दलित साहित्य के सैद्धान्तिक पदा का विश्लेषण ही ज्यादा पाया जाता है। दलित उपन्यास, कहानी और कविता पर ही समीक्षाएँ आ चुकी है।

दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र (ओमप्रकाश वात्मीकि), दलित राजनीति की समस्थाएँ (राजकिशोर), आधुनिकता के आईने में दलित (अभयकुमार), अम्बेदकरवादी साहित्यविमर्श (ईश गंगानिया), कबीर के आलोचक दलित सिविल कानून (डॉ.धर्मवीर), धर्मान्तरण और दलित (जयप्रकाश कर्दम) आदि रचनाएँ समीदा के क्षेत्र में काफी चर्चित रहा है।

अब हिन्दी साहित्य की सारी विधाओं में दलित रचनाएँ निकलने लगी है। दलित साहित्य का स्पष्ट प्रभाव कविता और उपन्यास के क्षेत्र में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। हीरा डोम और अछुतानंद से लेकर वर्तमान समय तक के दलित लेखकों के लेखन से संपन्न हिन्दी दलित साहित्य वर्तमान साहित्य जगत में अपना एक अलग स्थान प्राप्त किया है।

शोधार्थी एम.जि. कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम

हिन्दी की उपेक्षा क्यों?

सीताराम पाण्डेय

भारत न सिर्फ सम्पूर्ण प्रमुख सम्पन्न लोक तंत्रात्मक गणराज्य है बल्कि विभिन्न भाषाओं, विविधताओं और विश्वासों से युक्त एक विशाल राष्ट्र भी है। जो सदियों गुलामी के जंजीर में जकड़ा हुआ था। १५ अगस्त १९४७ ई. में इसे राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक और आर्थिक स्वतंत्रता सम्पूर्ण रूप से अवश्य मिल गयी। लेकिन भाषिक (भाषाई) और सांस्कृतिक स्वतंत्रता आंशिक रूप से ही मिली। क्योंकि पाश्चात्य अंधानुकरण और फैशन परस्ती ने हमको अंग्रेजी के प्रति मानसिक गुलामी से उवरने नहीं दिया और आज भी हम अपने ही देश में अंग्रेजी में बोलने, टाई लगाकर चलने में गर्व और गौरव महसूस करते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्तोपरान्त १४ सितंबर १९४९ ई. में भारतीय संविधान के अन्तर्गत देवनागरी लिपि में लिखी जानेवाली हिन्दी को देश की राजभाषा का दर्जा दिया गया; किन्तु वह केवल एक औपचारिकता का निर्वहन तक ही सीमित रह गयी और हम हिन्दी के अनुरागी इससे इतने आन्द विभोर हो गये कि इस आनन्दातिरेक में हमारा ध्यान वास्तविकता की ओर नहीं जा सका तथा हम समझ बैठे कि हिन्दी हमारी राजभाषा हो गयी। मगर वास्तविकता इससे दूर बहुत दूर छूट गयी।

यदि हिन्दी को राजभाषा के पद पर पूर्णरूपेण प्रतिष्ठापित करने की सच्ची नीयत होती तो जिस प्रकार स्वाधीनता के शुभागमन के साथ ही १४ अगस्त, १९४७ ई. को अंग्रेजों के शासन के स्थान पर हिन्दुस्तानियों के शासन की प्रतिष्ठा कर दी गयी, उसी प्रकार अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को व्यवहारिक एवं वास्तविक रूप से राजभाषा बना दी गयी होती।

इतिहास साक्षी हे - अपनी आजादी हासिल करने के पश्चात् आयरलैंड निवासियों ने पन्द्रह वर्षों की लम्बी अवधी की प्रतीक्षा नहीं की और दुसरे ही दिन उन्होंने 'आयर' में 'आयरिश' (केल्टिक) भाषा प्रचलित कर दी। कहना न होगा कि हमारी हिन्दी 'आयरिश' भाषा से कहीं अधिक समृद्ध और सम्पन्न थी और आज भी है।

हिन्दी हिन्दुस्तान की भाषा है। हिन्दु मुसलमान-क्रिस्तान की भाषा है। सारी हिन्द संतान की भाषा है। विश्व के सभी देशों में अपनी-अपनी भाषा का महत्व है, तो हमारे देश में शिक्षालयों से लेकर संसद राक, सरकारी कार्यलयों से लेकर कचहरी तक अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व क्यों कायम है? हमें अपने देश का खान-पान, अपनी भाषा अपना पहनावा क्यों नहीं रुचिकर लगता? अंग्रेजी और अंग्रेजियत के मुकाबले हेय लगता है। जिसके कारण अपने ही घर में हिन्दी उपेक्षित बनी हुई हैं।

सभी देशों में उस देश की मातृभाषा द्वारा छात्र-छात्राओं को शिक्षा दी जाती है, पर भारतवर्ष ही इकलौता एक ऐसा देश है जहाँ उनके बालक-बालिकाओं को विदेशी भाषा के द्वारा शिक्षा देकर उसकी प्रतिभा का पतन किया जा रहा है। आज वह माताजी के स्थान पर 'मम्मी' और पिताजी की जगह 'डैड' कहने को विवश है। भारतीय अभिवादन 'प्रणाम' और नमस्कार के बदले 'गुड मॉर्निंग' और 'गुड नाईट' सिखाया जाता है। अतः हमें इस ओछी मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा।

Committee of Public Instruction के सभापति लार्ड मैकाले भारतीय भाषा को शिक्षा-विभाग से दूध की मक्खी के समान निकाल कर जो बाहर फेंकने का प्रयास किया। वह हमारे दुर्भाग्य से सफल हो गया। 'मैकाले' का मूल उद्देश्य था - भारत की आत्मा को आहत कर आनन्द लेना और भारत में अंग्रेजी का वर्चस्व कायम करना। वह भाषा और शिक्षा के माध्यम से यहाँ की समृद्ध संस्कृति और प्राचीन परम्परा पर प्रहार करना चाहता था। सरकारी कार्यालयों से लेकर सभी महकमों के कार्य व्यवहारिक रूप से अंग्रेजी में होने के कारण नौकरी-पेशा वाले लोगों को विवश होकर अपनी मातृभाषा की प्यारी सुखद-गोद छोड़कर बीबी के प्रेम में लुब्ध होना पड़ रहा है।

१९९१ ई. की भारतीय जनगणना के भाषाखण्ड की प्रस्तावना में दिया गया यह कथन कितना सही व सटीक है, जिसमें कहा गया है कि - "भाषा आत्मा का वह रक्त है, जिसमें विचार प्रवाहित होते और पनपते हैं। यदि एक भाषा मरती है, तो एक जाति के हज़ारों की अनुभव, इतिहास और उसकी सांस्कृतिक विविधता की पहचान ही सदा-सदा केलिए समाप्त हो जाती है। रामचन्द्र शुक्ल ने भाषा के सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित करते हुए कहा था"-

"भाषा ही किसी जाति के भीतर के कलपूर्जों का पता देती है। किसी जाति को अशक्त करने का सबसे सहज उपाय उसकी भाषा को नष्ट करना है। लार्ड एल्फिस्टन ने ठीक ही कहा था- अंग्रेजी राज के पश्चात् स्वतंत्र भारत में भी अंग्रेजी भाषा, राज के

कीर्त्तिस्तम्भ के रूप में स्थापित रहेगी। यही बात १८६३ ई. में एच.एन.विल्सन ने भी कही थी कि अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नौजवानों के मन में अपने देश के लिए कोई सहानुभूति या सद्भावना नहीं रहेगी।"

विदेशी शासन का प्रभाव हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक भावों पर पड़ने के साथ संबंधित एवं साहित्यिक जीवन पर भी बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। सम्प्रति समाज में माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री आदि के परस्पर संबंधों की शाश्वतता समाप्त होती जा रही है और रिश्तों का व्यवसायिकरम होता जा रहा है। यह निश्चित रूप से पाश्चात्य देशों की संस्कृति के अनुकरण का ही प्रतिफल है। क्योंकि किसी भाषा का मर जाना एक संस्कृति का लुप्त हो जाना होता है। भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं बल्कि संस्कृति की संवाहिका के साथ-साथ की आत्मा भी होती है।

स्वतंत्र भारत के नागरिक हम आज भी भारत के उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालयों में हिन्दी में बहस नहीं कर सकते। न कोई हिन्दी में प्रार्थना पत्र ही दाखिल कर सकते हैं? वहाँ अंग्रेजी का अखण्ड राज आज भी कायम है। अपने संविधान अध्याय १३ की धारा ३४८ (१) में यह स्पष्ट रूप से उपबंधित है कि इस भाग के पूर्व उपबंधों के होते हुए भी जबतक संसद विधि द्वारा अन्य उपबंध न करें, तबतक उच्चतम न्यायालय या प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियाँ अंग्रेजी भाषा में होगी। लेकिन न्याययाललयों की सम्पूर्म कार्यवाही अंग्रेजी में ही क्यों? हमारी संवैधानिक राजभाषा हिन्दी में क्यों नहीं?

हिन्दी विश्व के सबसे बजडे लोकतंत्र की भाषा है। हिन्दी बोलने वाले विश्व के सर्वश्रेष्ठ भाषा-भाषी समूहों में गिने जाते हैं। यहाँ तक कि प्रवासी भारतीयों की सांस्कृतिक भाषा भी हिन्दी है। आप चाहे अफ्रिका महादेश में जाये या फिजी द्वीप समूह में, ड्रिनीडाड, डमरारा या सुरीनाम अथवा मारीशश उपनिवेश में, अमेरिका या चीन में, आपको यह देखकर आश्चर्य के साथ हर्ष भी होगा कि सर्वत्र हिन्दी की कीर्त्ति पताका फहरा रही है।

यह बात समझ में नहीं आती कि जिस भाषा ने हिन्दी को वर्षों दासी बनाकर रखी, जिस जुबान ने हमें सदियों गुलामी की जंजीर में जकड़कर परेशान करता रहा, उस अंग्रेजी भाषा को हम अपने देश में महारानी बनाकर क्यों रखे हुए हैं? रूस की रूसी, जापान की जापानी, चीन की चीनी, नेपाल की नेपाली अर्थात् सभी देशों की अपनी-अपनी भाषा है। जिसमें अतिथि सत्कार से लेकर संसद के भीतर तक उसका व्यवहार होता है। किन्तु भारत ही एक ऐसा अकेला जनतंत्रात्मक गणराज्य है जिसमें विदेशी भाषा का वर्चस्व आज भी कायम है।

कर्मवीर महात्मा गाँधी ने बरोच के गुजराती शिक्षा सम्मेलन के सभापति के हैसियत से कहा था - "शिक्षा में निपुण लोगों की सम्मति से जो शिक्षा अंग्रेजी के माध्यम से १६ वर्षों में दी जाती है। वह अपनी भाषा में १० वर्षों में दी जा सकती है। यदी हजारों नवयुवकों की जवानी के छः वर्ष बच जाये, तो देश को क्या कम फायदा होगा?"

हिन्दी की उपेक्षा से जहाँ तक विद्यार्थियों का संबंध है, उनसे निवेदन है कि वे श्रम और श्रद्धा के साथ अपनी हिन्दी का अध्ययन करें। प्रेरणा और पसीना का यह अमृत उपलब्ध करें, जिससे सर्व सरल साहित्य हिन्दी को अमरत्व मिले।

हिन्दी के लिए अहिन्दी शब्दों का बहिष्कार कभी भी मंगलकारी नहीं होगा। हिन्दी को विदेशी शब्दों के लिए अपना द्वार खुला रखना चाहिए क्योंकि हिन्दी की वाचन-शक्ति इतनी समर्थ बन गयी है कि उसने उर्दू, फारसी, अरबी आदि विदेशी शब्दों को ही नहीं पचाया बल्कि अंग्रेजी, लैटिन आदि अन्य भाषाओं के आनेवाले शब्दों को भी पचा डाला। यहाँ तक कि अब हिन्दी को पहाड़ी भाषाओं के पथरीले शब्द भी इसे अपच का शिकार नहीं बना सकते? यशस्वी पुरातत्वज्ञ डॉ. बासुदेव शरण अग्रवाल अपने अनुसंधानों के आधार पर करते हैं कि - "हिन्दी भाषा उस जल राशि की तरह है, जिसमें अनेक नदीयाँ आकर मिली हो।"

श्री.सुनीति कुमार चटर्जी कहते है कि "हिन्दी भाषा को भारतीय जनता तथा सम्पूर्ण मानवता के लिए बहुत बड़ा दायित्व संभालना है। हिन्दी का शिक्षण भारत में अनिवार्य ही होगा। हिन्दी में जो गुण है, उसमें से एक यह है कि हिन्दी मर्दाना जवान है। श्री.अनन्तशयन अयंगर कहते है कि, "अहिन्दी भाषी प्रान्त के लोग भी सरलता से टूटी फूटी हिन्दी बोलकर अपना काम चला लेते हैं।"

धारा ३४३, जो संघ की राजभाषा के संबंध में है, उसमें साफ तौर पर उल्लिखित है कि भारत संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। इसी अनुच्छेद ३४३ (१) में कहा गया है कि इस संविधान के प्रारम्भ में १५ वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा। स्वतंत्रता मिले करीब ६९ वर्ष हो गये। अब हिन्दी का ही सर्वत्र प्रयोग होना चाहिए। १९४७ ई. के बाद पन्द्रह वर्ष कब बीत गये। आज हिन्दी को व्यवहारिक धरातल पर राजभाषा के रूप में पूरे देश के कार्यालयों, संसदों, शिक्षण संस्थानों में प्रयोग होना चाहिए

अमर गीतकार कवि प्रदीप

बद्री नारायण तिवारी

"जो गीत मन को झंकृत न करे वह गीत नहीं" राष्ट्रकवि पद्मश्री सोहनलाल द्विवेदी कवि प्रदीप जी के लेखनी को साकार करते हैं।

मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र ने देश के विभिन्न आयामों में ऐसे-ऐसे रत्न दिए हैं, जिन्होंने न सिर्फ मालवा या मध्यप्रदेश बल्कि पूरा देश का नाम विश्व में रोशन कर नया इतिहास कायम किया है, आज हम यहाँ और आयामों की चर्चा छोड़ केवल फिल्मी क्षेत्र का ही जिक्र करते हैं। मालवा क्षेत्र को इन्दौर में जन्मी सुर साम्रानी लता मंगेशकर एक ऐसी हस्ती है, जिस पर भारत को काफी गर्व है और उनकी भारतीय संगीत की महान देन कास्मरण करते हुए ही उन्हें भारत सरकार ने अपने सर्वोच्च सम्मान "भारत रत्न" देकर सम्मानित किया। एक ऐसी ही दूसरी हस्ती रही हैं, उज्जैन जिले के बड़नगर कस्बे में जन्में श्री.रामचन्द्र द्विवेदी (प्रदीप) ने न सिर्फ फिल्म जगत को एक उत्कृष्ट साहित्य के माध्यम से नई पहचान दी, बल्कि अपने गीतों के माध्यम से राष्ट्र में एक नई राष्ट्रभक्ति की आंधी पैदा की। छः फरवरी १०१५ को बडनगर में जन्में प्रदीप जी १९३९ में मुंबई पहुँचे और वहाँ जो उन्होंने राष्ट्रभक्ति पूर्ण गीतों की गंगा प्रवाहित की, उसमें अवगाहन कर देश का हर वर्ग पवित्र हो गया। प्रदीप जी स्वयं एक अच्छे गायक और संगीतज्ञ भी थे। उन्होने अपने कई बीतों को प्रभावी स्वर भी दिया।

उन्होंने अपने प्रारंभिक गीतों में आजादी को पूर्व जहाँ विदेशी हुक्मरानों को अपने गीत *"दूर हटो ऐ दुनियावालों हिन्दुस्तान हमारा हैं"*। (किस्मत, १९४३) के माध्यम से इस देश को छोड़कर चले जाने हेतु ललकार लगाई, वहीं *"कदम-कदम बढ़ाए जा, खुशी के गीत गायेजा"* जैसे गीतों पर भारतीय सेना को कदमताल करने को मजबूर कर दिया। यदि हम प्रदीप जी को युगदृष्टा भी कहें तो लगत नहीं होगा, क्योंकि उन्होंने आज से सत्तर साल पहले जो लिख दिया वह आज चरितार्थ हो रहा है, उन्होंने १९४३ में जहाँ किस्मत फिल्म के माध्यम से *"आज हिमालय की चोटी से हमने फिर ललकारा है दूर हटो ऐ दुनियावालों हिन्दुस्तान हमारा है"*। लिख कर फिरंगियों को देश छोड़कर चले जाने की नसीहत दे कर

हिन्दी की उपेक्षा क्यों?...

और अंग्रेजी भाषा का बहिष्कार अनिवार्य रूप से अत्यावश्यक है।

कन्याकुमारी से लेकर काश्मीर तक और गुजरात से लेकर आसाम तक एक राष्ट्रभाषा होने की उपयोगिता का अध्ययन किया जाये, तो हिन्दी ही उस आसन के लिए उपयुक्त है। तभी तो सुविख्यात कवि एवं लेखक आदरणीय वंगिमचन्द्र चट्टोपाध्याय 'भारतेन्दु' के समय 'बंग दर्शन' द्वारा बंगाल के लोगों को कह गये थे कि - "बंगाल की भाषा तुम्हारी भाषा है। इसकी उन्नति करना तुम्हारा कर्त्तव्य बनता है। परन्तु तुम हो कितने आद्मी? भारत का सच्चा शुभचिन्तक वही होगा, जो हिन्दी भाषा की उन्नति के लिए सतत् प्रयासशील रहेगा।"

भारतीय जाति की सभ्यता और संस्कृति को जीवित रखने के लिए तथा उसकी अखण्ड राष्ट्रीय-भावना को परिपुष्ट करने हेतु हिन्दी की सुरक्षा करनी होगी। इसलिए हम अपनी इस हिन्दी को, जिसने अक्कड़, फक्कड़-सम्तमौला, मुँहफट कवि कबीर के दोहों, वात्सल्य एवं विप्रलम्भ श्रृंगार के सम्राट सूरदास के पदो, माता भारती के मंदिर के अनन्य उपासक-भक्त शिरोमणि 'तुलसी' की चौपाइयाँ, रहीम, रसिक रसरवान के दोहों, सवैयों ने हमारे संस्कारोकं को संपोषित एवं संवर्धित किया है। उस हिन्दी भाषा को हम कभी नहीं भूला सकते? हिन्दी पर आघात पहुँचाना हमारे प्राण-धर्म पर आघात पहुँचाना होगा।

अतः तमाम साहित्यकारों, सुधी पाठकों, कर्मचारियों, शिक्षकों के साथ सम्पूर्ण भारतवासियों से अनुरोध है कि अपने-अपने बाल-बच्चों को प्रमुख विषय के रूप में हिन्दी पढ़ाने-पढ़ने का प्रयास करें और अंग्रेजी को ऐच्छिक भाषा के रूप में व्यवहार कर सकते हैं। सरकार से भी निवेदन है कि तमाम औपचारिताओं से हटकर सरकारी कार्यालयों, विद्यालयों, महाविद्यालयों और देश के न्यायालयों में संवैधानिक हिन्दी भाषा में ही सम्पूर्ण कार्यवाहियाँ कराकर हिन्दी को ही समृद्ध एवं सबल बनाने की कृपा करें। ताकि अपने घर में हिन्दी को समुचित सम्मान प्राप्त हो और देश से अंग्रेजी को अलविदा कह दें तथा अपने घर में उपेक्षित हिन्दी माता के मन्दिर का अनन्य पूजारी बनकर पूजा करें।

'सब मिलि बोलो मंत्र महान्, हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्तान।'

रामबाग, षोपी, पो.रमणा,
जि.मुजपफरपुर-८४२००२ (बिहार)

महाराष्ट्र के किसान आन्दोलन पर...

वे वापस आयेंगे

वे लेने गये हैं जल की बूँदें
अन्न के कुछ दाने
ईंट-गारा और दरवाज़े की चौखट
वे लेने गये हैं
नन्ही केलिए पोल्का
नन्हे की कमीज़
वे लेने गये हैं
अपने हिस्से की ज़मीन
अपने हिस्से का आसमान

अपने हिस्से की चिडियाँ तितलियाँ मछलियाँ
वे वापस आयेंगे
वे इस बार किसी मंदिर में नहीं गये हैं
कोई प्रार्थना नहीं करेंगे वे ईश्वर से
वे गये है इस बार
वे शहरों से अपने खेत छीनेंगे
संसद से अपने बीज
इस बार वे जरूर वापस आयेंगे

सूखी धरती पर
छिडकेंगे जल की बूँदें
बोयेंगे अन्न के दाने
गायेंगे प्रणय गीत
नन्ही ठुमकेगी नया पोल्का पहिनकर
पील करेंगे बडकी के हाथ
क्योंकि वे इस बार किसी ईश्वर से
प्रार्थना करने नहीं गये हैं।

राजहंस सेठ

आजादी के पूर्व खुद को गिरतारी की जोखिम में डाला, वहीं १९५४ में नास्तिक फिल्म के माध्यम से आज के इंसान के बारे में कहा *"देख तेरे संसार की हालत क्या हो गई भगवान, कितना बदल गया इंसान"* ईश्वर से शिकायत की उन्होंने इसी गीत में यह भी लिखा *छल और कपट के हाथों अपना बैंच रहा ईमान*।

उन्होंने इसी गीत में कट्टर साम्प्रदायिकता पर भी चोट करते हुए लिखा *"आया समय बड़ा बेढंगा आज आदमी बना लफंगा, कहीं पे झगड़ा, कहीं पे दंगा, नाच रहा नर होकर नंगा, राम के भक्त रहीम के बंदे, रचते आज फरेब के फंदे, कितने ये मक्कार ये अंधे, देख लिये इनके भी धंधे, इन्हीं की काली करतूतों से बना है मुल्क मसान कितना बदल गया इंसान"* मैंने प्रदीप जी को युगदृष्टा यूं ही नहीं कहा, आज भी वही सब हो रहा है जो उन्होंने सत्तर साल पहले लिखा। यही नहीं, १९५४ की अपनी जाग्रति फिल्म में जो उन्होंने बच्चों को सीख देते हुए आज की स्थिति काउसी समय वर्णन कर दिया था, उन्होंने लिखा था - *"एटम बमों के जोर पे ऐठी है, ये दुनिया बारूद के एक ढेर पे बैठी है ये दुनिया, तुम हर कदम उठाना जरा देखभार के, हम लाए हैं तूफान से कश्ती निकाल के, इस देश को"* अब उनसे बड़ा राष्ट्रभक्त कवि और कौन होगा जो १९५८ में तलाक फिल्म के गीत के माध्यम से इस देश के पहरेदार सैनिकों को यह आगाह कर दे कि - *"झांक रहे हैं अपने दुश्मन, अपनी ही दीवारों से, सम्हल के रहना अपने घर में छुपे हुए गद्दारों से"*। उसी समय प्रदीप जी ने इस तरह हमारे पड़ोसी चीन से सावधान कर दिया था और इसी चीन के हमले के बाद १९६३ में उन्होंने वह गीत लिखा जिसने पं. जवाहरलाल नेहरू को आंसू बहाने को मजबूर कर दिया *"मेरे वतन के लोगों जरा आँख में भर लो पानी, जो शहीद हुए हैं उनकी जरा याद करो कुर्बानी"*। कवि प्रदीप जी यद्यपि आज इस असार संसार में नहीं हैं, उन्होंने ११ दिसंबर, १९९८ को ही हम से अलविदा ले ली, किन्दु उनकी राष्ट्रभक्ति के साथ मालवमाटी के प्रति भक्ति भी एक मिसाल थी, वे अपने गीतों में जहा मालवा को याद कर लेते थे, वहीं मालवी शब्दों को भी बड़ी खूबसूरती से राष्ट्रभक्ति की माला में पिरो देते थे उदाहरण दे दिये - उन्होंने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के बारे में लिखे अपने अमर गीत *"दे दी हमें आजादी बिना खड़ग बिना ढाल, साबरमति के संत तूने कर दिया कमाल"* के अन्त मेकं जहाँ यह लिखा कि - *"जिस दिन तेरी चिता जली रोया था महाकाल उज्जैन"* के महाकालेश्वर का पुण्य स्मरण किया, वहीं इसी जागृति (१९५४) फिल्म के एक गीत रखा ये चिराग शहीदों ने बाल के की पंक्ति में ठेठ मालवी शब्द बाल का उपयोग किया, जिसका मालवी में अर्थ जलाने से है। इस तरह प्रदीप जी एक ऐसे संत राष्ट्रकवि थे जिनके पारसमयी स्पर्श से अटल बिहारी वाजपेयी जैसा स्वर्ण कवि साहित्य और राजनीति दोनों क्षेत्रों में दैदिप्यमान हुआ। प्रथम स्वाधीनता दिवस १५ अगस्त १९४७ को कानपुर के समारोह में "यह आजादी अभी अधूरी है.." गीत गाकर कुलपति अध्यक्ष द्वारा १०/- रुपये का पुरस्कार प्राप्त किया था।

**मानस संगम, महाराज प्रयाग नारायण मन्दिर,
शिवाला, कानपुर नगर २०८००१**

लघुकथा : अतीत से भविष्य की ओर

किशनलाल शर्मा

लघुकथा-अतीत से भविष्य की ओर : साहित्य में लघुकथा की भागीदारी अपने विभिन्न स्वरूपकं में वर्षों पुरानी है। यह साहित्य की अनुपम धरोहर के रूप में साहित्य का एक अनमोल खजाना भी है और इस खजाने को संभालकर रखना हमारा नैतिक कर्तव्य भी है।

कुँवर प्रेमिल का यह कथन लघुकता की उत्पत्ति के बारे में बहुत कुछ कह देता है। लघुकथा का जन्म तब हुआ होगा, जब आदमी को भाषा का ज्ञान हुआ होगा। हज़ार-हज़ारों वर्षों से दादा-दादी, नाना-नानी, माँ-बाप आदि द्वारा रात को सोते समय बच्चों को सुनाई जाने वाले किस्से, कहानियाँ लघुकथायें ही थीं। इन कथाओं का स्वरूप हर युग में बदलता रहा है। पहले सुनाई जाने वाली लघुकथायें पशु-पक्षी, चांद-तारे, प्रकृति से सम्बन्धित रही होंगी। कालान्तर में मानव सभ्यता के विकास के साथ समाज, राज्यों, देशों की स्थापना के साथ कथाओं के पात्रों में राजा-रानी, परियां, भूत-प्रेत आदि का समावेश हुआ होगा।

छोटी-छोटी कथाएं हर युग में लिखी जाती रही हैं। इनको बोधकथा, लोककथा, प्रेरणाप्रद आदि नामों से जाना जाता है। पंचतन्त्र, हितोपदेश, जातक कथा के साथ-साथ पौराणिक ग्रन्थ छोटी कथाओं के अथाह भन्डार हैं। उनमें लघुकथायें बिखरी पड़ी है।

पूर्ववर्ती लेखकों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रेमचन्द, सुदर्शन, परसाई, गुलेरी आदि अनेक लेखकों ने भी छोटी कथाएं लिखी हैं। पौराणिक काल हो या परतन्त्र या स्वतन्त्र भारत हो, हर युग में लिखी, छोटी कथायें हिन्दी साहित्य का अनमोल खजाना, धरोहर है।

लघुकथा शब्द की उत्पत्तिः पूर्व में लिखी गई, चाहे काल खण्ड कोई भी रहा हो, लघु कथाओं को लघुकथा नाम नहीं दिया गया। वे विभिन्न नामों - जातक कथायें, पंचतन्त्र की कथायें, पौराणिक कथायें आदि नामों से ही जानी जाती रहीं। लघु जाकार की रचनाओं को लघुकथा नाम देने का विचार बुद्धिनाथ झा कैरव के मन में आया। उनके दावारा छोटी रचनाओं को १९४२ में लघुकथा नाम दिया गया और फिर लघु रचनायें इसी नाम से जानी जाने लगीं। हिन्दी साहित्य का वर्गीकरण-हिन्दी साहित्य को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता हैः गद्य और पद्य।

गद्य के भी अनेक भाग हैं। उपन्यास, कहानी, लेख (इसके भी अनेक भाग है), निबन्ध (निबन्ध भी कई तरह के होते है)। संस्मरण, रेखाचित्र, जीवनी, नाटक, रिपोर्टाज, एकांकी, पत्रलेखन, यात्रा संस्मरण, साक्षात्कार आदि आदि।

यद्य के भी अनेक भाग हैं - कविता, गीत, हाइकु, छंद, दोहे, चौपाई, गजल, नवगीत, जनक छंद, नई कविता आदि आदि।

लघुकथा गद्या विद्या की रचना है।

लघुकथाः लघुकथा क्या है? यह प्रश्न हर एक के मन में उठ सकता है? डॉ.मोह.मोइनुद्दीन अतहर के शब्दों में - "लघुकथा न चुटकला है, न ही कहानी का छोटा रूप। यह तो लघुरूप में बुराइयों पर प्रहार करने वाला ऐसा हथियार है, जो सामाजिक बुराइयों को समूल नष्ट करने अथवा आघात करने में सक्षम हैं"।

लघुकथा की परिभाषायेंः "कथा विद्या के सागर में एक बूंद ही तो हे लघुकथा। आकार में लघु, क्षणिक घटना या परिस्थिति का वर्णन करती। किन्तु मारक क्षमता, तारक क्षमता, संवेदना, साम्प्रेषण में विस्तृत विभाओं के समक्ष खड़ी नजर आती है यह"।

डॉ.नीरज सुधांशु कथा विधा की सबसे छोटी इकाई को लघुकथा मानती है। उनका कथन पूर्णतया सत्य है। आकार में लघु होने के कारण ही इसका नाम लघुकथा पड़ा है।

बलराम अग्रबाल के शब्दों में "मनुष्य के समसामयिक संवेदन तन्तुओं को प्रभावित करने वाली वस्तु विशेष की सूक्ष्म एवं समग्र कथात्मक प्रस्तुति का नाम लघुकथा है"।

डॉ.बालेन्दू शेखर तिवारी की राय में, "लघु आकार की वह कथात्मक विधा है, जिसमें समझ और अनुभव की सम्भवतः सर्वाधिक संश्लिष्ट अभिव्यक्ति संभव है"।

त्रिलोक सिंह ठकुरेला के शब्दों में "लघुकथा गद्य साहित्य की वह लघु आकारीय विधा है, जो अपने कथ्य एवं कथोपकथन द्वारा किसी क्षंण, घटना, परिस्थिति अथवा विचार को प्रभावपूर्ण ढंग से पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करती है"।

सुरेन्द्र गुप्त के अनुसार "लघुकथा का अन्त मारक होना चाहिये। रचना की भाषा सहज व सरल होने के साथ रचना में सौन्दर्य के अनुसार आंचलिक शब्दों का प्रयोग होना चाहिये"।

राजेश शर्मा प्रियदर्शी के शब्दों में "लघुकथा भोगा हुआ यथार्थ या आपबीती है"।

महावीर प्रसाद जैन के शब्दों में "लघुकथा कम से कम शब्दों में असरदार ढंग से किसी भी संवेदना की प्रस्तुति है"।

डॉ.सतीश दुबे के शब्दों में "लघुकथा संक्षेप में कही गई सहज, स्वाभाविक अभिव्यक्ति है, जो पाठकों को मानवीय संवेदना से जोड़ती है"।

सुरेश जंगिड उदय के शब्दों में "कम समय में अपने विचारों को अधिक और कम से कम शब्दों में लिखने की कला को ही लघुकथा कहते हैं"।

लघुकथा पर शोध कर चुकीं डॉ.शकुन्तला किरण के शब्दों में "लघुकथा एक प्रकार से कम आय वाले एक अर्थशास्त्री का अपना निजी बजट है, जिसे वह प्रबुद्धता के साथ बहुत सोच समझ कर बनाता है कि प्रत्येक पैसे का सार्थक उपयोग हो सके"।

व्यंग्य का पुटः डॉ.मोह. मोइनुद्दीन अतहर का मानना है कि जिस तरह सब्जी में नमक जरूरी है, उसी तरह लघुकथा में व्यंग का पुट हो तो बेहतर है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि बिना व्यंग्य के लघुकथा नहीं लिखी जा सकती।

समाज में अनेक विसंगतियाँ हैं, विद्रुपताये हैं, समाज सिर्फ धर्म, जाति, क्षेत्रीयता में ही नहीं बंटा है। अमीरी-गरीबी में भी बंटा है। आदमी-औरत में भी बंटा है।

अनेक रूढ़िया, परम्परायें, खोखली मान्यतायें हैं। व्यवस्था की खामियां हैं। भ्रष्टाचार-अनाचार है। आर्थिक विषमतायें हैं, विखरते परिवार-टूटते दाम्पत्य हैं। बेरोजगारी, आर्थिक मन्दी, अलगाववाद, आतंकवाद... अन्त नहीं समस्याओं का, नशे का बढ़ता प्रचलन, राह भटकते युवा-युवती, आत्महत्या करते किसान, चन्द लोगों के हाथों में सिमटती दौलत-

ये सब जन्म दे रही हैं लघुकथाओं को और ये एक प्रकार का व्यंग्य ही तो है।

जिंदगी के करीब कुछ और परिभाषायें लघु कथा गकी - और भी अनेक विद्वानों/साहित्यकारों ने लघुकथा को परिभाषित किया है। डॉ.माहेश्वर के शब्दों में "कम से कम शब्दों में काफी पुरअसर ढंग से जिंदगी का एक तीखा सच कथा में ढाल दिया जाय, तो वह लघुकथा कहलायेगी"।

इसका सीधा अर्थ है - हमारे आस-पास देश दुनिया में जो घटित हो रहा है, वो ही लघुकथा को जन्म देता है, तभी तो सतीश राठी कहते हैं - जिंदगी की तमाम विसंगतियों पर वजनदार चोट करने में पूर्ण सक्षम होती हैं।

इसीलिये रमेश बतरा ने कहा था - लघुकथा जीवन की आलोचना है।

यह तभी संभव है, जब उसमें मारक सच हो। मतलब जो दिल पर सीधे-सीधे चोट करे। प्रसिद्ध लघु कथाकार बलराम अग्रवाल कहते हैं - मारक तत्व लघुकथा का मूल तत्व है। यदि लघुकथा पाठक में लितमिलाहट उत्पन्न नहीं करती, पठनोपरान्त उसमें चिन्तन, जिज्ञासा उत्पन्न नहीं करती, तो यह उसकी कमजोरी है।

अलग-अलग लोगों ने लघुकंथा को अलग-अलग तरह से परिभाषित किया है, लेकिन कमल किशोर गोयनका का मानना है कि अभी तक इसकी कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकी है। इनका यह कथन सच है, तभी तो लघुकथा को परिभाषित करने का सिलसिला थमा नहीं है। लगातार जारी है। मेरी नजर में लघुकथा-

अनेक विद्वानों, सभी साहित्यकारों लघुकथाकारों ने अनेक तरह से लघुकथा को परिभाषित किया है। अभी तक जितनी भी परिभाषायें आई हैं, जो यहाँ उद्धृत हैं या नहीं हैं, सभी का मूल है कि कथाविधा की सबसे छोटी इकाई लघुकथा है, जिसमें कथा के सभी तथ्य सम्माहित होते हैं। और उन सभी परिभाषाओं को आत्मसात करने के बाद मेरी राय में लघुकथा की परिभाषा निम्न है-

"कम से कम शब्दों में कथात्मक शैली में तीखे सच को उभारना लघुकथा है"।

जैसा नाम से ही स्पष्ट है, लघुरचना को लघुकथा कहा जाता है। इसका मतलब यह हर्गिज नहीं है कि हर लघुरचना यानि चुटकुला आदि भी लघुकथा हो गई।

लघुकथा के तत्वः कोई भी लघुरचना, तभी लघुकथा मानी जायेगी, जब उसमें लघुकथा के तत्व मौजूद हों। एक लघुकथा में मो.मोइनुद्दीन अतहर के अनुसार निम्न तत्वों का समावेश जरूरी है।

संक्षिप्तताः लघुकथा, जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, लघुकथा का संक्षिप्त होना जरूरी है। इसकी संक्षिप्तता की वजह से ही इसकी लोकप्रियता बढ़ रही है।

संवेदनशीलताः लेखक स्वयं देखी हुई किसी घटना या किसी

से सुनी किसी घटना को लघुकथा का रूप देता है। लेखक जितना ज्यादा संवेदनशील होगा, उतनी ही ज्यादा उसकी लघुकथा।

संप्रेषणीयता: यह लघुकथा की जान हैं। लेखक की कलम से निकली बात पाठक के दिल को चूनी चाहिये।

स्वाभाविकता: लघुकथा बनावटी नहीं लगनी चाहिये। स्वाभाविक लगनी चाहिये। लघुकथा स्वाभाविक लगेगी, तभी पाठक उससे अपने को जुड़ा महसूस करेगा।

गंभीरता: आमजन की चेतना के जितना समीप लेखक का चिंतन होगा। लेखक उतनी ही ज्यादा गंभीर लघुकथा लिखेगा।

मौलिकता: मौलिक रचना ही श्रेष्ठ रचना होती है और पाठक को रोचकता प्रदान करती है। इसलिये लेखक को मौलिक लेखन ही करना चाहिये।

बोधगम्यता एवं सरलता: प्रथम वाक्य से ही पाठक को बांधने में सक्षम होनी चाहिये। पाठक लघुकथा पढ़ते समय उसमें खो जाये। घटना प्रवाह पाठक की रोचकता बढ़ाती है।

लघुकथा की बाषा सहज एवं सरल होनी चाहिये, जिसको पाठक आसानी से समझ सके।

व्यंग्यात्मकता: जैसे सब्जी में नमक होता है। ऐसे ही लघुकथा में व्यंग्य का पुट हो, तो उसकी मारक क्षमता बढ़ जाती है।

इन सब तत्वों के अलावा लघुकथा का शीर्षक महत्वपूर्ण है। लघुकथा का शीर्षक ऐसा होना चाहिये जो सम्पूर्ण लघुकथा को व्यक्त करने में पूर्णतया सक्षम हो।

परिभाषा और रचना: परिभाषा का रचना पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। कोई भी लेखक परिभाषा को ध्यान में रखकर साहित्य की रचना नहीं करता। शरद जोशी और हरिशंकर परसाई परिभाषाओं के चक्कर में न पड़ने वाले लघुकथाकार हैं।

समसामयिक लघुकथाकार लक्षणमुक्त होकर लघुकथा को नये संवेदन और शिल्प से समृद्ध कर रहे हैं।

यथार्थ की कल्पना: लघुकथा का जन्म कपोल कल्पित घटना से नहीं होता। किसी न किसी घटना से लघुकथा का सूत्र मिलता है। विचार लघुकथा के दिमाग में आता है। यह विचार बीज का काम करता है। बीज अपने आप जमीन में उगता नहीं है। उसे रोपना पड़ता है। खाद-पानी देने के साथ उसकी देखभाल करनी पड़ती है। तब बीज अंकुरित होकर जमीन से बाहर आकर पेड़ बनता है।

इसी तरह लघुकथा के बीज को लघुकथा के पेड़ के रूप में विकसित करने के लिये लेखक को क्या करना पड़ता है? इसका उत्तर पुरुषोत्तम दुबे के इस कथन से मिल जाता है - कोई भी लघुकथा लिखने से पूर्व चिंतन के घोड़े अवश्य दौड़ाने पड़ते है।

इस कथन का अर्थ साफ है। लघुकथा का जो सूत्र लेखक ककको किसी घटना से मिलता है। उस पर लेखक को मनन करना पड़ता है। चिंतन करना पड़ता है। कल्पना करनी पड़ती है। तब कहीं वह घटना लघुकथा बनती है।

इसका अर्थ स्पष्ट है। लघुकथा न तो पूर्ण रूप से सत्य घटना है। ना ही कोरी कल्पना। बल्कि दोनों का मिश्रण है। यह लेखक की अपनी योग्यता, अनुभव पर निर्भर करता है कि वह सत्यता और कल्पना का तालमेल बैठाकर और लघुकथा के मूल तत्वों को ध्यान में रखते हुये कैसे उस घटना को जीवंत कर पाता है। संवेदनशील बना पाता है। इसको कमल चौपड़ा ने इन शब्दों में व्यक्त किया है - रचनाकार यथार्थ को अपनी चेतना, प्रतिभा, सोच, विवेक और कल्पनाशीलता के प्रयोग से रचना को मूर्त रूप देता है।

लघुकथा कितनी लघु: जिस तरह लघुकथा की कोई सर्वमान्य परिभाषा अभी तक स्थापित नहीं हो पाई है। उसी तरह लघुकथा कितनी लघु हो, इस पर भी कोई सर्वमान्य विचार नहीं बन पाया है। कोई दो पेज की कथा को लघुकथा मानता है, तो किसी का तर्क है तीन सौ शब्दों या पाँच सौ शब्दों तक की रचना को लघुकथा माना जाना चाहिये।

लेकिन लघुकथाऐ तो एक दो लाइनों में भी लिखी जा रही हैं। कहने का मतलब है, अभी तक लघुकथा की कोई शब्द सीमा तय नहीं हो पाई है। (शेष अगले पृष्ठ में)

१०३, रामस्वरूप कॉलेनीस शघ्गंज, आगरा २८२०१०

"निज भाषा उन्नति, अहै, सब उन्नती को मूल"

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

"राष्ट्रभाषा के बिना एक राष्ट्र गूँगा है"

महात्मागाँधी

"जाति न पूछो साधू की, पूछ लीजिए ज्ञान
मोल करो तरवार का, पड़ा रहन दो म्यान"

कबीरदास

वैशिक धरातल पर हिन्दी का प्रसार तथा उपादेयता

शंकरलाल महेश्वरी

भाषा हमारे माथे की बिंदिया है जो जन जन में समरसता और संवाद में सहजता का आविर्भाव कराती है तथा सभी को एक सूत्र में बांधती है। भाषा उ, नदी के समान है तो शीतल, मधुर जल से मानव मात्र को आप्लावित करती है। सुखों, दुखों में साथ निभाने का हौसला बढ़ाती है। विश्व के एकीकरण तथा विश्व से एक सूत्र में आबद्ध करने में भाषा से अधिक कोई भी तत्व बलवती नहीं हो सकता। - लोकमान्य तिलक

हिन्दी यद्यपि हमारी राष्ट्रभाषा हैं फिर भी समूचे विश्व में इसका अत्यधिक प्रभाव है। विश्व स्तर पर शिक्षा, प्रशासन, समाचार पत्र, संचार प्रक्रिया, दूरदर्शन, आकाशवाणी कार्यक्रम आदि में हिन्दी भाषा का उपयोह निरंतर बढ़ता जा रहा है। यद्यपि यह सही है कि सर्वत्र साहित्यिक हिन्दी भाषा का प्रचलन संभव नहीं है किन्तु विज्ञापन, पत्रकारिता, तकनीकी शिक्षा व्यावसायियक क्षेत्र, प्रिंट मीडिया तथा संचार साधनों के उपयोग में सरल हिन्दी भाषा प्रयुक्त होती रही है। प्रयोजन मूलक हिन्दी का उपयोग अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ता जा रहा है तभी तो आठवें हिन्दी सम्मेन में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव बान की मून ने कहा था, हिन्दी दुनियाँ भर के लोगों को पास लाने का काम कर रही है। यह एक ऐसी भाषा है जो दुनियाँ भर की संस्कृतियों के बीच एक पूल का काम कर ही है। आज विश्व स्तर पर हिन्दी के प्रचार प्रसार में प्रिंट व इलेक्ट्रोनिक मीडिया का महत्वपूर्ण योगदान है। इन्दरनेट, व्हाट्सएप, फेसबुक, ट्विटर, इमेल और इ पत्रिकाओं के साथ ही कई वेबसाइट्स से हिन्दी भाषा के प्रसारण को बल मिला है। इसीलिए हिन्दी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय जगत में बहुआयामी बनती जा रही है। विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी को प्रवेश दिलाने में होमी भाभा विज्ढान शिक्षा केन्द्र मुम्बई द्वारा सन् २००८ में हिन्दी में शिक्षण सामग्री को विकसित तथा प्रसारित किया था साथ ही एक स्वतंत्र इ लर्निग पोर्टल का शुभारम्भ भी किया था। इस पोर्टल में ई बुक्स, ई लेख ई प्रश्न मंच तथा ई प्रश्न माला आदि का समावेश है। साथ ही प्रशिक्षण हेतु हिन्दी में कई सोफ्टवेयर तैयार किए गये हैं।

जैसे-जैसे विश्व स्तर पर वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान बढ़ता जा रहा है उसी के साथ भाषा के महत्व में भी बढ़ोतरी हो रही है। विचार क्रांति के इस युग में निरन्तर वैश्विक स्तर पर होने वाले परिवर्तन में भाषा की उपयोगिता भी दिनों दिन बढ़ रही है। विश्व स्तर पर हो रही संचार क्रांति में भाषा ही का महत्वपूर्ण योगदान है। भाषा ही वह माध्यम है जिसके कारण आर्थिक सम्पन्नता में अभिवृद्धि संभव हो रही है। रोजगार की अपार संभावनाओं का होना भी भाषा पर ही निर्भर है। आज हमारे देश की सांस्कृतिक परम्पराओं भारतीय दर्शन, योग, अध्यात्म तथा संवाद व संचार साधनों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जो मान्यता मिली है उसमें भाषा का सर्वोपरि योगदान है।

भूमण्डलीकरण के साथ ही विश्व स्तर पर आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सह संबंधों के कारण वैचारिक स्तर पर वैश्विक चिन्तन का प्रादुर्भाव अवश्य हुआ है। औद्योगिकरण, विश्व व्यापार, संचार सुविधाओं तथा बाजारवाद के क्षेत्र में वैश्विक संकल्पना का समावेश हुआ है। उसी तरह वैश्वीकरण के कदम बढ़ते जा रहे हैं। हमारी अवधारणाओं तथा मान्यताओं में भी देजी से परिवर्तन होता जा रहा है।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा भी स्पीक करेक्ट हिन्दी, यूज हिन्दी ऑडियो, वीडियो, सीडी आदि का प्रचलन प्रारम्भ किया गया था जो हिन्दी भाषा को प्रसारित करने में संबंल प्रदान करता है। गूगल क्वारा भी इंटरनेट के माध्यम से हिन्दी भाषा को विशेष रूप से उपयोगी बनाया गया है। गूगल के तत्कालीन मुख्य कार्यकारी अधिकारी एरिक स्मिड ने कहा है, "जिन भाषाओं का इंटरनेट पर दबदबा रहने वाला है उनमें हिन्दी की संभावनाएं ज्यादा अच्छी है।"

शोध के क्षेत्र में भी हिन्दी भाषा का प्रचुरता से उपयोग हो रहा है। नेपाल, भूटान, श्रीलंका, मालदीव, चीन, जापान, सिंगापुर, इंडोनेशिया, मारीशस, मलेशिया, कोरिया खाड़ी देश आदकि देशों में लेखन कार्य शिक्षण व प्रशिक्षण आदि कार्योकं में हिन्दी भाषा का प्रयोग बहुलता से होता हैं। कई देशों में हिन्दी के प्रचार प्रसार हेतु इण्डिया स्टडी सेंटर भी प्रारम्भ हुए है। सार्वजनिक एवं सेवाभावी संस्थाओं तथा हिन्दी भाषा के संस्थानो द्वारा हिन्दी के व्यापक प्रचार प्रचार हेतु योजनाबद्ध कार्य होता है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी परिषदें, हिन्दी प्रचार सभाएं तथा अखिल विश्व हिन्दी समिति आदि संस्थाओं द्वारा राष्ट्रीय व अनत्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी भाषा का प्रचार प्रसार व्यापक रूप से हो रहा है। हिन्दी भाषा कदी विभिन्न परीक्षाओं का संचालन भी विश्व स्तर पर होता है। जो हिन्दी के प्रचार प्रसार में उपयोगी है।

विश्व स्तर की बहुराष्ट्रीय कंपनियां भी हिन्दी प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। इनके द्वारा व्यापार को बढ़ाने तथा व्यवसाय को प्रत्येक देश में स्थापित करने में हिन्दी का व्यापक उपयोग किया जाता है जो इनके विज्ञापन तथा व्यवसाय को संबंल प्रदान करता है। कंपनियों में कार्यरत हज़ारों की संख्या में कर्मचारियों को हिन्दी का ज्ञान कराया जाता है ताकि अपने व्यवसाय में विशेष वृद्धि हो सके। इस दिशा में वॉइस ऑफ अमेरिका, बीबीसी लंदन, डेनमार्क तथा अन्य देश भी हिन्दी प्रसारण में अग्रगण्य है। हिन्दी के प्रचार प्रसार में अप्रवासी भारतीयों का विशेष योगदान रहता है। विदेशी लेखकों द्वारा लिखित साहित्य का अनुवाद हिन्दी भाषा में प्रचुर मात्रा में हो रहा है। राष्ट्रीय पत्र पत्रिकाओं में अनुदिन कहानियां, कविताओं व अन्य रचाएं प्रकाशित होती है वे भी हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार का सशक्त माध्यम है जो विश्व स्तर पर वैचारिक आदान प्रदान के लिए भी चित माध्यम बनती है। भारत सरकार द्वारा भी अनुवाद मिशन की स्थापना भी इस दिशा में सहयोगी सिद्ध हो रही है। विश्व स्तर पर हजारों की संख्या में पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित होती है जिनमें साप्ताहिक, मासिक, द्विमासिक एवं त्रैमासिक पत्रिकाएं सम्मिलित है। इनकी विषय सामग्री भी हिन्दी भाषा को धन्य कर रही है।

तत्कालीन बुश प्रशासन द्वारा अमेरिका के सात राज्यों में १४ सितंबर को हिन्दी दिवस मनाने की घोषणा से भी विश्व धरातल पर हिन्दी भाषा का प्रसार हुआ है वे राज्य है ओडायो, कनेक्टीकट, पं. बरजानिया, नीरिजन, न्यूजर्सी इंडियाना, पेंसिलवेनिया एवं नेब्रारका। श्रीलंका में एक विश्व विद्यालय ने हिन्दी को वहाँ के शिक्षण तथा शोधकार्य के लिए प्रयुक्त किया है। यूरोप, एशिया और अमेरिका के अनेक प्रदेशों में हिन्दी भाषा एवं हिन्दी साहित्य को विशेष बढ़ावा दिया गया है। विदेशों में हिन्दी के व्याकरणिक स्वरूप को उनकी सामाजिक संरचना तथा सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप प्रयुक्त किया गया है। उनके विभिन्न नामांकन है फिजियन हिन्दी, नेटाली हिन्दी, कीओली हिन्दी आदि। विश्व स्तर पर जैसे जैसे सूचना प्रौद्योगिकी का विस्तार हुआ है भारतीयों से हिन्दी में संवाद स्थापित करने के लिए विदेशी लोग हिन्दी भाषा का विशेष अध्ययन कर रहे हैं। जो उनके व्यापार व व्यवसाय में गुणात्मक अभिवृद्धि करेगी। विदेशो से कई विद्यार्थी हिन्दी पढ़ने केलिए भारत में आ रहे हैं ताकि हिन्दी सीखकर वे रोजगारोन्मुखी बन सके। केरेबीयन देशों में तो हिन्दी ही से वहाँ की समग्र अर्थव्यस्था संचालित व नियंत्रित हो रही है। हिन्दी भाषा के प्रचुर मात्रा में प्रयोग के कारण ही अंग्रेजी शब्दकोष में हिन्दी समाविष्ट हुई है। जैसे योग, सत्य, अहिंसा, अवतार, स्वस्तिक, सत्याग्रह, देव, सत्य, स्वस्तिक आदि। अभिव्यक्ति के अवसरों पर भाषा में हिन्दी मुहावरों और कहावतों का प्रयोग भी बढ़ता जा रहा है।

विश्व स्तर पर वर्तमान में बदलते संदर्भों के अनुसार शब्दों का चलन भी परिवर्तित स्वरूप लेता जा रहा है। ब्रदर्स डे (रक्षा बंधन) इसबैण्ड डे (करवा चौथ) सेल्फी, आईडिया, बिल, पोटेल, टपोरी, झकास जैसे अनेक संकर शब्दों का समावेश बढ़ता जा रहा है। हिन्दी भाषा में अंग्रेजीकरण से प्रभावित शब्द भी प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हो रहे है। जैसे-स्पीकना, सीखिंग, जाईंग, बनाईंग आदि प्रयोग भी युवा पीढ़ी से मुखरित होती सुनाई पड़ती है। भाषा में मिश्रण या कोड मिक्सिंग की प्रवृत्ति दिनो दिन बढ़ती जा रही है इससे हिन्दी का व्यवहार क्षेत्र विस्तार लेता जा रहा है।

लिंग भेद की समानता की दृष्टि से नई विचारणा के अनुसार कुछ उभयलिंगी शब्दों का प्रयोग भी होने लगा है। जैसे-मीडिया कर्मी, कृषिकर्मी, सैन्यकर्मी आदि। हिन्दी भाषा की सरलता बोलने में सहजता हिन्दी का समृद्ध साहित्य तथा बोलने वालों की प्रचुर संख्या होने के कारण ही हिन्दी विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा बन गई है। प्रसिद्ध भाषा विद डेविड ग्रेडन का कथन है कि "आगामी पचास वर्षों में हिन्दी विश्व की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा बन जायेगी।" इसी प्रकार डॉ.जयन्ती प्रसाद नोटियाल की भाषा शोध २०१५ के अनुसार राष्ट्रसंघ की अधिकृत भाषाओं में हिन्दी बोलने वालों की संख्या सर्वाधिक है।

वैश्विक धरातल पर व्यापक रूप से हिन्दी भाषा को व्यवहारगत बनाने के लिए...

- जन मानस में सकारात्मक सोच की आवश्यकता है।
- हिन्दी बाषा की शब्दावली में सरलता व सहजता का समावेश हो।
- अंग्रेजी की तकनीकी शब्वावली को हिन्दी में स्वीकार्य किया जाए।
- भाषा में संक्षेपाक्षरों का समावेश हो।
- वैश्विक भाषा के शब्दों के मिश्रण को मान्यता दी जाए।
- तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाली पुस्तके हिन्दी भाषा में हो तथा तकनीकी शब्दावली को हिन्दी में स्वीकार्य किया जाए।
- भाषा में संक्षेपाक्षरों का समावेश हो।
- वैश्विक भाषा के शब्दों के मिश्रण को मान्यता दी जाए।

हिन्दी साहित्यकारों की प्रेम दृष्टि

नन्दकिशोर बावनिया

प्रेम सनातन सत्य है। वह ईश्वर का रूप है। प्रेम की सत्ता संसार में व्याप्त है। जिनके हृदय में प्रेम बसता है वहाँ वासना की भूख - प्यास नहीं होती। प्रेम, समस्त लोक व्यवहार, जाति, धर्तम, देश काल से ऊपर है। वह सर्वोच्च है। रति की कामना प्रेम को अपंग और अंधा बना दैती है। वह पथभ्रष्ट होकर वासना के गर्द में समा जाता है। प्रेम की भाषा मूक है। वह आँखों से और बिना दृष्टि के भी व्यक्त किया जा सकता है। प्रेमी चाहे कितनी ही दूर हो प्रेम में सदा ही हृदय के निकट होकर धडकनों में धड़कता रहता है। प्रेम की लहरे हृदय सागर में निरन्तर उठती-गिरती रहती है। प्रेम में कोई रीति-रिवाज, औपचारिकतायें, नियम, स्थान, पात्र, परिस्थितियां बाधक नहीं हो सकती।

हारे मन मस्तिष्क में पल-पल, हर-पल एक कौतूहल, एक आकुलता भरा प्रश्न, एक जिज्ञासा सदैव घुमडती रहती है। यह एक आलौकिक अनुभूति है। इसे दार्शनिकों, लेखकों, चिन्तकों, कवियों और विद्वानों ने - अपने-अपने ढंग से व्यक्त करने का प्रयास किया है, लेकिन फिर भी वह अव्यक्त ही रहा।

बेकन कहते है, "प्यार समर्पण और दायित्वों का दूसरा नाम है।"

जार्ज बर्नाड शॉ ने कहा, "जीवन में प्रेम का वही महत्व है जो फूल में खुशबू का।"

मीर लकी मीर का मानना है, "जिस प्यार में प्यार करने की कोई हद नहीं होती और किसी तरह का डर या पछतावा नहीं होता, वही प्यार का सच्चा रूप है।"

आचार्य रजनीश के अनुसार, "पुरुष प्यार अक्सर धोड़ा करता है किन्तु स्त्री प्यार सौभाग्य से और स्थाई करती है।"

शेक्सपीयर कहते हैं, "प्रेम आखों से नहीकं दिखता, इसलिये वह अंधा कहा गया है।"

महात्मा गांधी कहते "प्रेम कभी दावा नहीं करता, वह हमेशा देता है। वह सदैव कष्ट सहता है, कभी बदला नहीं लेता।"

कुढ भी हो यह बात सर्वदा सत्य है कि प्रेम एक निर्मल अनुभूति, एक कोमल भावना, समर्पण इच्छा का दिव्य रूप है। उसे शब्दों में व्यक्त करना दुरूह और दुक्कर है। लेकिन इसका रूप और प्रवाह सरल है। इसके समर्थन में ही धनानंद ने, "अति सूघो सनेह को मारग, जँह जैकु सयानप बाँक नहीं।" राधा और कृष्ण का प्रेम जनमानस में व्याप्त होकर, लोक मंगल की भावना को उदात्त बनाती है। प्रेम, उत्सर्ग की अपेक्षा करता है, वह केवल देना जानता है, उसे कुछ पाने की लालसा नहीं रहती। इसीलिए रहीम ने कहा है,

वैशिक धरातल पर हिन्दी का प्रसार तथा उपादेयता

- मौलिक लेखन द्वारा पत्र पत्रिकाओं को समृद्ध बनाया जाए।
- पाद्य पुस्तकों व पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहित किया जाए।
- ई बुक्स व ई पत्रिकाओतं को अधिकाधिक प्रकाशित किया जाए।
- विभिन्न विषयों की पारिभाषिक शब्दावली को इंटरनेट पर प्रस्तुत किया जाए।
- वैश्विक हिन्दी सभा सम्मेलनों में विज्ञान तथा कनीकी आदि आधुनिक वैज्ञानिक सामग्री से संबंद्ध शब्दावली के लिए हिन्दी को सशक्त बनाने हेतु प्रयास किया जाए।
- वैश्विक परिपेक्ष में भाषा के स्वरूप में आधुनिकीकरण को बढ़ावा दिया जाए।
- प्रवासी हिन्दी साहित्य को महत्व दिया जाना चाहिए।
- विश्व स्तर पर हिन्दी विषयक पुरस्कारों को विशेष महत्व दिया जाए।

अंग्रेजी के प्रभाव से मुक्त होने के लिए हिन्दी को सर्वग्राह्य बनाने की आवश्यकता है।

हिन्दी भाषा जिसकी लोकमान्यता विश्वस्तर पर है। वह संसार में भावात्मक एकता का स्रोत हैं जो विभिन्न जातियों, धर्मो, समुदायों और वर्गों तथा देशों के भिन्न भिन्न मान्यताओं के होते हुए भी वसुधैव कुटुम्बकम की भावना की अनुभूति कराती है।

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी, आगूँचा पोस्ट,
भीलवाड़ा जिला ३११०२२, राजस्थान

"प्रेम पंथ ऐसो कठिन, सब कोई निबहत नहीं।" प्रेम में सौन्दर्य नगण्य है, वह भावनाओं के सौन्दर्य का सृजन करता है।

कबीर के शब्दों में

पोथी पढ-पढ जग मुआ, पंडित भया न कोय
ढाई आखर प्रेम का, पढै सु पंडित होय।
प्रेम आत्मा में उपजता है वह किसी औपचारिकता का मोहताज नहीं है।

सुरदास ने प्रेम बिरह में कहा-

बधुबन तुम कत रहत हरे।
विरह वियोग स्याम सुन्दर के ठाढ़े क्यों न नजरे।
वहीं जायसी ने प्रेम का रूप ऐसा देखा-
बहु तन्त ऐस जीव पर खेला।
तू जोगी कित आहि अकेला
विक्रम घँसा प्रेम कै बारा।
सपनावति कहँ गवउ पतारा।

बिहारी ने प्रेम रूप को समझने में असमर्थता व्यक्त गी है-

या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहीं कोई
ज्यों ज्यों बूडै स्याम रँग, त्यों त्यों उज्जलू होइ।
बिहारी ने प्रेम के इस रंग को अनुठा नरूपित किया है। यह प्रेम होता ही ऐसा है।

पदमाकर ने प्रेम की मनः स्थिति को प्रकृति में व्यक्त किया है। वे इसके लक्षण को बताते हुए कहते है -

घर न सुहात न सुहात बन बाहर हूँ, बग न सुहात जे खुसाल खुस बोही साँ
कहै पदमाकर घनेरे घन - घाम त्यों ही चन्द न सुहात चाँदनी हूँ जग जोही सौ।

मतिराम ने प्रेम के लक्षण ककको इस प्रकार स्वीकारा है।-

रावने नेह को लाज तजी अरू गेह के काम सबै बसिरायो
डारि दियो गुरू लोगन कौ डर, गाँव चवाई में नाम धरायो।
वही देवा ने गोपियों के मन में उपजे अति आनन्द को उघो से तकरार कर इस प्रकार व्यक्त किया।
राबरो रूप रह्यो भरि नैननि, बैनानि के रस सौ सुति सानो
गात में देखत गात तुम्हारोई, बात तुम्हारिए बात बखानो।

घनानंद ने प्रेम के मार्ग को बहुत सीधा और सरल माना है लेकिन कुछ अपेक्षा भी की है।

घनानंद प्यारे सुजान सुनो, इत एक तो दूसरी ऑक नहीं। तुम कौन घौ पाटी पढ़े हौ लला, मन लेहूँ पै देरु छटाँक नहीं।

खुसरो ने प्रेम को आध्यात्मिक रूप में देखा। उन्होंने प्रेम का एक ऐसा रंग देखा जिसमें आत्मा और परमात्मा एक हो जाते है-

छाप तिलक सब छीनी रे मो से नयना मिलाई के।
बत अगम कहि दीनी रे मो से नयना मिलाई के।
.....
प्रेम नहीं का मदवा पिलाई के।
मतवारी कर दीनी रे मो से नयना मिलाई के।

वहीं मीराबाई की कृष्ण भक्ति, उससे प्रेम, प्रियतम का मिलन, उसके समर्पण में एक अलग अनुभूति देता है।

बाला मै बैरागण हूँगी
जिस भेषाँ म्हारो साहिब रीझे, सो ही भेष धरूंगी
सील संतोष धंरू घट भीतर समता पकड़ रहूँगी
जाको नाम निरंजन कहिये, ता को ध्यान धरूंगी।

बोधा कवि को प्रेम की राह विकट लगती है।

कवि बोधा अनी घनी जे जहुँ ते, चढ़ि तापै न चित्त डरावनो है।
यह प्रेम को पन्थ कराल महा, तरवारि की धारि पै धावनो है।

रत्नाकर ने कहा प्रेम का नशा ऐसा चढ़ता है कि हम सब सुझ बुझ भूल जाते है। और बहकने लगते है। रत्नाकर ने इस पद्य में प्रेम का उत्कर्ष बताया है।

प्रेम मंद छाके पग परत कहाँ के कहाँ थाके अंग नैननि शिथिकता सुहाई है।
कहै रतनाकर यौंआवन चकात ऊर्धो मानो सुधियान कोऊ भावना भुलाई है
धारत धरा पै ना उदास अति आदर सौ सारत बँहोलिनि जो आँस अधिकाई है
एक कर राजै नवनीत जसुदा को दियौ एक कर वंसी वर राधिका पढाई है।

भारतेन्दु जी ने प्रेम को इस प्रकार व्यक्त किया है

हम कौन उपाय करे इनको हरिचन्द महा हठ मानती है
.....
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना, आँखिया दुखियां नहीं मानती है।

मैथिलिशरण गुप्त -

दोनों ओर प्रेम पलता है।

सखि पतंग भी जलता है, हा! दीपक भी जलता है
सीरा हिलाकर दीपक कहता-बन्धू! वृथा ही पू क्यों दहना है।

माखनलाल चतुर्वेदी जी ने प्रेम में अध्यात्मिक अनुभूति देखी है

है कौन सा वह तत्व, जो सारे भुवन में व्याप्त है
ब्रह्मांण्ड पूरा भी नहीं, जिसके लिये पर्याप्त है
.....
वह प्रेम है, वह प्रेम है, वह प्रेम है, वह प्रेम है

सुमित्रा नन्दन पंत ने एक गृहणी से प्रेम की अभिव्यक्ति करके प्रेम को ग्रहस्थी में उपयोगी और आवश्यक माना है।

आज रहने दो यह गृहकाज, प्राण रहने दो यह गृहकाज
आज जाने कैसी वातास छोडती सौरभ श्लथ उच्छवास
प्रिये, लालसा-सालस वातास, जमा रोओं में सौ अभिलाष।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला भी प्रेम अभिव्यक्ति ही निराली है। इसमें उच्चकोटि का प्रेम प्रदर्शन है-

प्यार करती हूँ अलिः इसलिये मुझे भी करते है वे प्यार
बह गई हूँ अजान की ओर, तभी यह बह जाता संसार
रुके नहीं धनि, चारण घाट पर, देखा मैने मरण बाट पर
टूट गये सब आट-ठाट, पर छूट गया परिवार
आज बही या बह दिया था, खिंची स्वयं या खींच लिया था
नहीं याद कुछ कि क्या किया था, हुई जीत या हार।

जयशंकार प्रसाद ने प्रेम रस का आनन्द कुछ यूं बिखेरा है

माना कि रूप सीमा है सुन्दर,
तब चिर यौवन में
पर समा गये थे, मेरे मन में निस्सीम गगन में
लहरों में प्यास भरी है, है भंवर पात्र भी खाली
मानस का सब रस पीकर लुढ़का दी तुमने प्याली।

हरिवंशराय बच्चन ने प्रेम का प्रकृति को रूपों में ढ़ाल कर देखा और अनुभूत किया है।

उधर झुकती अरुनारी साँझ, इधर उठता पूनों का चाँद
सरों श्रंगों, झरनों का फूट पड़ा है किरनों का उन्माद
तुम्हें अपनी बाहों ने देख नहीं कर पाता मैं अनुमान
प्रकृति में तुम बिम्बित चहूँ ओर, कि तुममें बिम्बित प्रकृति अशेष।

गोपाल सिंह नेपाली ने तो प्रेम पर पूर्णतया न्यौछावर होने का मन बना लिया है वे प्रिय के लिये संसार तक त्याग देने को तत्पर है

इस जीवन की सारी ननिधियाँ निष्ठर तुम पर वार चुका मैं
तुम्हें जीतने के लालच में, तुमसे ही अब हार चुका मैं
तुम न अगर मिलते मुझको, तो क्या करता मै दुनिया लेकर
तुमको अपनाने को केवल दे अपना संसार चुका मैं।

महादेवी वर्मा ने प्रेम में पीड़ा में और पीडा में ही प्रेम को ढुँढा। वे अपने अस्तित्व को प्रेम की करुणा के स्वरूप में देखती है

मेरे बिखरे प्राणों में, सारी करुणा दुलका दो
मेरी छोटी सीमा में, अपना असितित्व मिटादो
पर शेष नहीं होगी, यह मेरे प्राणों की क्रीड़ा
तुमको पीड़ा में ढूँढा, तुम में ढूंढूगी पीड़ा।

शिव मंगल सिंह सुमन ने अपने प्रिय के विरह में कहा है

बहुत दिनों में आज मिली है साँझ अकेली, साथ नहीं हो तुम
पेड़ खडे फैलाये बाहै! लौट रहे घर को चरवाहे यह गो घूली!
साथ नहीं हो तुम।

रामकुमार वर्मा ने जग की नश्वरता से प्रेम के महत्व को प्रतिपादित किया

मैं तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ
जानता हूँ इस जगत में फूल की है आयु कितनी
और यौवन की उभरती सांस में है वायु कितनी
इसलिये आकाश का विस्तार सारा चाहता हूँ

गिरजा कुमार माथुर ने प्यार भी महानता और उसके महत्व को बताया कि प्यार की महिमा कितनी महान होती है-

तुमने प्यार नहीं पहिचाना
तुमने जिसको समझा गागर, आज भरा वह मेरा सागर
वे मेरे मोती थे, जिनको तुमने समझ लिया था पत्थर
उन सफेद हल्के फूलों को, तुमने छोड़ा धूल बताकर
मिटती लहर सोचकर तुमने उठता ज्वार नहीं पहचाना।

रामावतार त्यागी ने प्यार के आत्मबल को दर्शाया है-

न तुम छूते अगर चट्टान कैसे गल गई होती।
धधकती आग कैसे रौशनी में ढ़ल गई होती।

धर्मवीर भारती ने प्रेम को पवित्र माना है। उसके महत्व को बतलाते हुये कहते है-

अगर मैने किसी के होंठ के पाटल कभी चूमे
अगर मैंने किसी के नैन के बादल कभी चूमे

विधि समस्या और समाधान –भारत का न्यायिक जनतंत्र

सुरेन्द्र प्रताप सिंह

कार्ल फ्रैडिक संविधानवाद (Constitutionalism) को जनतंत्र का पर्याय बतलाते हैं और उनके अनुसार रूस का जनवादी जनतंत्र (Peoples Democracy) भी रशियन संविधानवाद है। भारतीय संविधान के निर्माता केवल दो प्रकार के संविधानों से ही प्रभावित थे - एक तो संसदीय लोकतंत्र के से, जो इंग्लैण्ड में है और दूसरे संघवादी अध्यक्षीय लोकतंत्र से, जो अमेरिका में विकसित हुआ। इन दोनों प्रकारों के लोकतंत्रों को समन्वितकरने में ही उन्होंने अपनी एक विकासशील कॉलोनी की राजनीतिक समस्याओं के समाधान ढूँढ़े और सामाजिक नवनिर्माण को न्यायपालिका (Judiciary) और नौकरशाही (Bureaucracy) के भरोसे छोड़ कर, सुदूर भविष्य की अपेक्षा की। आरक्षणों की राजनीति से वर्तमान की संक्रमणकालीन समस्यायें तोकिसी तरह निपटती रहीं, पर हमारी न्यायपालिका, जो अभी भी पूरी तरह संभ्रांत और कुलीन वर्ग (Aristoratic class) के कब्जे में है, अन्य संस्थाओं को तो लोकतंत्र का अर्थ समझा रही है, पर स्वयं अपने को लोकतांत्रिक सहभागिता (Participation) और जवाबदेहिता (Accountability) से बचाना चाहती रही है। ब्यूरोक्रेसी के ढ़ाँचे के अनुसार हम सीनियर्टी के सिद्धांत को सुपीरियर्टी की योग्यता समझते हैं और हमारे चीफॉ जस्टिस पर उनके साथी चार न्यायाधीशों का यह आरोप है कि वे उन्हें अधीनस्थ (Subordinate) अधिकारी समझते हैं और समान योग्यताधारी कलीग (Collegue) ही नहीं मानते। हमारे संविधान निर्माता सुयोग्य वकील थे, उन्हें अमेरिकी संविधान का ज्यूडिशियल रिव्यू का सिद्धांत लोकतांत्रिक तो लगा, पर वे यह भूल गये कि हमारे डिग्रीधारी मी लॉर्डस अपने ब्रदर जजों को नौकरशाही के सबोर्डिनेट अधिकारी सम समझते हैं और यदि वे जूनियर कलीग्स, कोर्ट की प्रक्रिया तोड़कर अब जनता की अदालत में जाना चाहते हैं तो वे भी कन्टेम्पट ऑफ कोर्ट कर रहे हैं, क्योंकि भारतीय जनता तो संविधान के अनुसार न्याय के खेल की एक मूकदर्शक मात्र है, उसे यह अधिकार कैसे दिया जा सकता है कि वह संविधान के संरक्षण कार्य में अपनी राय देकर सहभागी भी बने और नाराज जजों के साथ होने वाले कथित अन्याय के आरोपों को भी सुने। अतः झूठ बोल-बोल कर सब कुछ दबाया और छुपाया जा रहा है। जस्टिस करणन के अपराध के बारे में हमारे सांसद और विधायक भी नहीं जानते। जस्टिस लोया की मौत हुई या हत्या की गई, यह एक ऐसा आरोप है, जिसे न्यायमूर्ति लोया स्वयं भी अपनी ही कोर्ट में सुन सकते थे।

न्यायपालिकायें एक जनतंत्र में तीन कार्य करती हैं। (1) प्रथम तो वे नागरिकों को न्याय दिलवाने के लिए संविधान की रक्षा है। (2) दूसरे वे संविधान की व्याख्यायें करती हैं और (3) तीसरे वे नागरिकों को उनके मूल अधिकार दिलवाती रहती है। अतः उनका तटस्थ और स्वतंत्र होना अत्यंत आवश्यक है। पर इसका अर्थ यह नहीं कि उनकी सम्यक आलोचना ही न की जाय या वे सिविल सेवकों की तरह केवल नियमानुसार ही कार्य करें। ज्यूडिसियरी को ब्यूरोक्रेसी की तरह देखने से अपीलों की व्यवस्था सीनियर्टी सिद्धान्त को बढ़ावा देती है और यदी जज, सिविल सेवकों के जैसे सीनियरों के आज्ञाकारी जूनियर हो जायें, तो देश की न्यायव्यवस्था का पूरा दर्शन ही ध्वस्त हो जाता है।

एक विदेशी राज में तो इस सब पर बहस करना ही मना था और इसी अवमानना कानून (Contempt Law) का सहारा लेकर हमारी न्यायपालिका एक होली काऊ बन चुकी है। अब जो स्थिति उभर रही है, वह लोकतांत्रिक भारतीय समाज में न्यायपालिका (Judiciary) से वे सवाल पूछ रही है जो बेंथम ने कभी ब्रिटिश जजों से पूछे थे-

1. न्याय समाज में बिकने वाली कोई एक ऐसी वस्तु या सेवा है, जिसे खहीदा या बेचा जा सके? *(आगे...)*

महज़ इससे किसी का प्यार मुझ पर पाप कैसे हो
महज़ इससे किसी का स्वर्ग मुझ पर शाप कैसे हो।

प्रेम ईश्वर का वरदान है,

वह एक आलौकिक आनन्द की अनुभूति है। इसमें प्रेम, स्नेह, अनुराग, वात्सल्य सभी समाहित है। जीवन में प्रेम का संचार ही तो जीवन को जीवन बना देता है। प्रेम एक उर्जा है जिसका रूपान्तर अलग अलग रूप में होता है, लेकिन अन्त नहीं। हर हाल में प्रेम अपरिभाषित होकर रह जाता है।

यह प्रेम ही है जिसने बादशाहों को फकीर बना दिया। इसी के वशीभूत हो देश प्रेमी हंसते हंसते फाँसी के फंदे पर झूल गये। प्रेम शब्द नहीं निःशब्द है, असीमित और अनन्त है।

६३, सरस्वती नगर धार (म.प्र.) ४५४००१

हिन्दी के विख्यात साहित्यकार
पत्मविभूषण
श्री. गोपालदास नीरज को
केरल हिन्दी साहित्य अकादमी
की भावभीनी श्रद्धांजलि

विधि समस्या और समाधान –भारत का न्यायिक जनतंत्र (पिछले पृष्ठ से)

2. क्या महिलायें और दलित वंचित वर्ग अपने मूल अधिकार या न्याय पाने के लिए सामन्ती वकीलों की अभिजात्य व्यवस्था से प्रार्थना करें?

3. क्या न्याय को किसी भी एक सर्वोच्च अधिकारी द्वारा अन्याय में बदल दिये जाने पर (उसे बिना सजा दिये) स्थिति को न्याय में बदला जा सकता है अधवा नहीं?

ये प्रश्न न्यायिक सुधारों के क्षेत्रों में एक सधन बहस चाहते हैं जो अब आरम्भ होने के लिए छटपटा रही हैं। न्यायपालिका का लोकतंत्रीकरण आज संभव है, और उसे तटस्थता और ईमानदारी के नाम पर दबाना कोर्टों को उद्देश्यभ्रष्ट करना होगा। हमारे वकील और जज स्वयं अपने आपसे पूछें कि (1) ट्रिपल तलाक, हज सब्सिडी या मदरसों में प्रार्थना के प्रश्न क्या कानूनी विशेषज्ञों की काटों में कभी भी सुलझाये जा सकेंगे? (2) क्या लालूप्रसाद की कथित अरबों की बेनामी संपत्ति का आरोप एक कानूनी प्रश्न मात्र है? (3) क्या एक राजपूत महिला के जौहर जलाने का प्रश्न फिल्म जगत में निवेशकर्ताओं और अमबानियों तथा भंसालियों की कला सेवा के क्षेत्र हैं? कमाने खाने के लिए वकीलों का व्यवसाय दलीलें देता रहेगा। पर न्याय कानून का शासन (Rule of Law) मात्र नहहीं होता और लोकतंत्र में कानून भी वह नहीं माना जा सकता जो किसी एक व्यक्ति की अन्तिम आशा हो। यदि ऐसा हो गया तो हिंसक विद्रोह होंगे और उनके सफल होने पर इतिहास उन्हें क्रान्ति कहेगा।

हमने संसदीय और अध्यक्षतात्मक लोकतंत्रों को मिलाकर जो राजव्यवस्था बनाई है, वह अब न्यायिक लोकतंत्र (Judicial Democracy) की तरफ मुड़ रही है। ऐसा उदाहरण अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिलता। संविधानवाद की दुनिया में यह एक अभिनव प्रयोग है जो न्यायिक सुधारों पर एक सघन बहस चाहता है, अन्यथा न्यायिक जगत के अपराध एक नई प्रकार की न्यायपालिका मांगेंगे। कोर्टों का सम्मान जनता द्वारा तभी संभव हो सकेगा जब-

1. देश का साधारण नागरिक कोर्ट की व्यवस्था से जुड़ा हुआ होगा।
2. महिलायें और पिछड़े वर्ग के लोग भारी संख्या में वकील और जज बन चुके होंगे।
3. न्याय जनता की भाषा में मिल रहा होगा और अभी कानपुर में महामंत्रि राष्ट्रपति ने भी यही कहा
4. न्यायाधीश भी एक विद्वान व्यक्ति न होकर एक फ्लेनम या रोटेशनल अधिकारी अथवा बहुसदस्यीय अभिकरण होगा।

कोर्टवाम्पाउन्द्र, सिविल लाइन्द, कानपूर 208001